प्रकाशकः—

श्री पर्णकुटी प्रकाशन

नागदा ज० (ग्वा. स्टेट)

प्रथमावृत्ति २०००

सुभाष-जयन्ति

२३, जनवरी १६४७

मूल्य ॥-)

मुद्रकः—

मोहनलाल उपाध्याय 'निर्मोही'

जैनोदय प्रि. प्रेस, रतलाम

समर्पण

जिसका प्रतिभामय सपूत हो
बढ़ा रहा द्युतिमय रवि-रथ
वीरप्रसू—माँ प्रभावती को
क्यों न समर्पित हो "जय-पथ ?"

'स्नेही'

अनुक्रम



जय-पथ

'जय-पथ'' स्वतन्त्र भारत की अस्थायी सरकार के प्रथम अध्यक्ष विश्वमान्य नेता श्री सुभाषचन्द्र बोसके उज्ज्वलतम आदर्श जीवन का धूमिल रेखा-चित्र है।

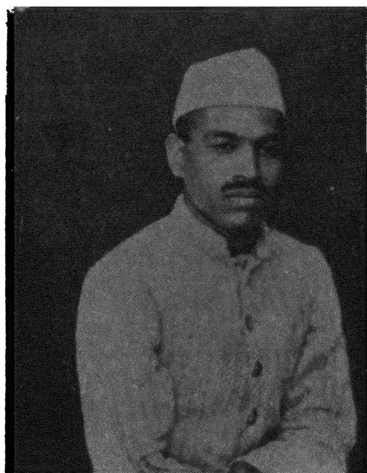
"जय-पथ" के लिखने में कवि का उद्देश्य नेताजी का यशोगान करना नहीं रहा है। हाँ, उनकी शौर्यमयी सुयश-सुरभिसे अपने कविता-कानन के शब्द सुमनों को सुवासित करने के पावन मोह ने उसे अवश्य आकृष्ट किया है।

महापुरुष वही है जिसमें कविता का नायक बन सकने की क्षमता हो और जिसका चरित्र-चित्रण करने में कवि की लेखनी गौरव का अनुभव करे। "जय-पथ" के कविको इस बातका गर्व है कि उसका चरित्र नायक विश्वमान्य महापुरुष है।

प्रस्तुत पुस्तकके प्रकाशन में भाई श्री चन्दनलालजी मेहता (इन्दौर) का अमूल्य सहयोग प्राप्त हुआ है। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। भाई श्री "निर्मोही" जी का आभार भी मुझे माननाही पड़ेगा जिनकी सुव्यवस्था में पुस्तक सुविधापूर्वक छप सकी।

"स्नेही"

जय-पथ ~



लेखक

जय-पथ

नेताजी



मुक्त भावना के प्रतिनिधि तुम,
मारुत की साँसो के स्पन्दन;
यौवन की गति के संञ्चालक
अमर रहो माँ के आशा-धन !



अवतार

कोकिल की मधुर प्रभाती सुन,
प्राची का स्वर्णिम द्वार खोल;
कुङ्कुम--केशर की सजा थाल,
मुक्ता–मणियों की लिए माल;
चल पड़ी बधाई देने को,
ऊषा, स्वर्णिम संसार खोल।
उस ओर जहाँ पर प्रकटा था,
शतदल का उत्फुल्लित सुहास;
ज्योतिर्मय बालारुण सुभाष।

[सन् सतानवे (१८ ९७) के प्रथम मास !]

सौरभ का मृदु उपहार दिए,
मलयाचल ने भेजा समीर;

देकर शतपत्रों का पराग,
अन्तर्तम का स्नेहानुराग;

(करने जननी का अङ्गराग
उस प्रभावती का अङ्गराग)

जिसने प्रकटाया था, अनन्त,
बल—वीर्य पुञ्ज नर-रत्न धीर ;

दिनमणि की प्रतिभा को नत-शिर,
करनेवाला दुर्दम प्रकाश।

निज प्रतिभा से भासित सुभाष।



विद्यार्थी–जीवन

वह शिक्षार्थी, जिससे शिक्षा,
लेते थे शिक्षक भी सुविज्ञ ;
अत्यन्त प्रखर व्युत्पन्न बुद्धि,

शशि सी निरभ्र चारित्र्य-शुद्धि,
जिसकी ऋषि चर्य्या पर चलकर;
होते थे साधक, साधु–संज्ञ ।

जिसकी स्थितप्रज्ञ अवस्था में ,
निर्वैर वृत्ति करती निवास ;
राजर्षि वीतरागी सुभाष ।



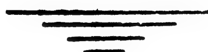
राष्ट्रीय—क्षेत्र में ——

निज जीवन की ममता त्यागे ,
वह चला खोजने विश्व-त्राण ;

कर विशद अध्ययन, चला पांथ,
जननी की पीड़ा से अशांत ।

विप्लव-वीणा के तारों पर ,
गाता यौवन के अनल-गान ;

म्रियमाण मनुजता ने पायी,
जिस की गतियों से नई साँस ;
स्वातन्त्र्य वीर सैनिक सुभाष ।



योद्धा

साम्राज्यवाद की आँखों की,
किरकिरी बना वह दिव्य तेज ;

उस ओडायर का पाप देख,
मानवता का परिताप देख।

(परवशता का अभिशाप देख)
पशुता का ताण्डव लास देख—
कैसे न शौर्य होता सतेज ?

हो तरुण-रक्त में जब उबाल
कब बैठ सका नर निष्प्रयास ?
नरसिंह अजय योद्धा सुभाष।



कृष्ण-मन्दिर में —

उस धधक रहे अङ्गारे पर;
नौकरशाही की पड़ी दृष्टि ।

भीषण कारा के द्वार खोल;
पशु ने पौरुष का किया मोल ।

समझा न, निशा का तिमिर निगल;
रचता है दिनमणि नव्य—सृष्टि ।

उस सिंह-सुवन को लोह-कड़ी,
कैसे कर सकती थी हताश !
चिर मुक्त समीरण सा सुभाष ।



निर्वासन

हो सकी न रिपु को सह्य अभि,
सुत को जननी से किया दूर।

निर्वासनास्त्र का कर प्रहार;
चाहा कर देगें शांत ज्वार।

प्रतिबन्धों से क्या रुका कभी,
सावन-सरिता का प्रबल पूर ?

सङ्कीर्ण वृत्ति से तो उसकी,
गतियों का विस्तृत हुआ व्यास।
नभ की असीमता सा सुभाष !



राष्ट्रपति

बन्धन की कड़ियां तोड़ खींच ,
ले आया जननी का दुलार ;

प्रतिबन्ध शिथिल होगए श्रांत,
था उमड़ पड़ा सागर प्रशांत ;

उत्साहमयी लहरों के उर ,
ले उठा हिलोरें मूक प्यार ;

मां के तिमिरावृत अन्तर को,
फिर आज मिला था नव प्रकाश;
जन-जन मन का अधिपति सुभाष।



विद्रोही

उस देवदूत का 'देवदत्त',
था व्यग्र सुनाने रण-निनाद ;

"रिपु से कह दो दे राष्ट्र छोड़,
या रण में दो अभिमान मोड़";

अब सह्य न होगा क्षण भर भी,
तरुणाई को माँ का विषाद ;

बापू के शांत विमर्शों से,
हो उठी तीव्रतर मुक्ति-प्यास।
निष्क्रियता का द्रोही सुभाष !



दृढ़ सङ्कल्प

सोचा कि-"बिना कुछ यत्न किए,
परवशता से होंगे न मुक्त।";

"माँ के चरणों से हो विदूर;
रिपु की गरिमा को करूँ चूर।

"भारत की उष्ण तरुणता की
गतियों को कर रण-पथ-प्रयुक्त।"

आँधी की साथिन आग बने
क्यों भस्मसात् होगी न घास।
जय-पथ का आरोही सुभाष!



रात्रि का प्रथम प्रहर

था रजनी का प्रथम प्रहर वह,
तिमिरावृत अवनी—आकाश;

सोचा होगा तम ने-"जग से,
नष्ट हुआ रवि का साम्राज्य;
बृहद विश्व पर मेरा शासन,
होगा निष्कंटक अविभाज्य।"

किन्तु न सोचा-रवि की गतियाँ,
कभी नहीं लेती अवकाश।

जैसे शांत नहीं रह सकता,
माँ का वीर सपूत सुभाष;
तरुण-तपस्वी वीर सुभाष।

निशि की छाया में भी दिनमणि,
करता है निज पथ-प्रस्तीर्ण ;

नीरधि के उर के समीप ही,
रहती बाड़व-अग्नि प्रचण्ड;
नीरद के अञ्चल में ही तो,
रहती है चपला उद्दण्ड ।

कैसे तम में रह सकती है
अग्नि-चक्र की गति सङ्कीर्ण ?

उस दिन रिपु के दृग में ही क्या
छिपकर बैठा था न सुभाष ?
पारतन्त्र्य का शूल सुभाष ।

भारत के दिनकर ने निशि के,
प्रथम प्रहर में किया विहार ।

गयीं जयद्रथ वध करवानें,
किरणें अस्ताचल की ओर;
बोधिसत्व सा निकल पड़ा था,
छूने विमल-मुक्ति का छोर ।

कलकत्ता से पेशावर को,
ले अतुलित बल का आधार,
भारत के दिनकर ने निशि के,
प्रथम प्रहर में किया विहार ।

लालपुरा के पथ से जय का,
काबुल पहुँचा था विश्वास;
संसृति का उत्साह सुभाष ।



रात्रि का द्वितीय प्रहर —

अर्ध निशा में पहुँचा दिनकर,
सात समुन्दर के उस पार।

बर्लिन के पथ पर स्वागत को,
सजे हुए थे बन्दनवार;
मानवता को आज मिला था,
पशु की पशुता का परिहार।

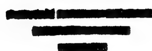
भारत के शोणित में फिर से,
हुआ तरंगित माँ का प्यार।

मुक्त-हिन्द के सैन्य गठन में;
लगा लगन से सुभट सुभाष;
पौरुष की प्रतिमूर्ति सुभाष।



रात्रि का तृतीय प्रहर —

हुआ तीसरे प्रहर निशाके,
दूर पूर्व के उर आलोक।
आया था सन्देश मुक्ति का,
भर सुभाष का दिव्य शरीर;
एक बार फिर हुआ प्रवाहित,
नव-आशा का मलय समीर;
भारत की आकुल तरुणाई,
धोने लगी विवशता-शोक।
सिंगापुर की दुर्जयता को,
चरण चूम कर हुआ हुलास;
विजय-तृषा का जलद सुभाष।



रात्रि का चतुर्थ प्रहर

शुभ मुहुर्त में विश्व-विजयको
गूँजा रण का शङ्ख निनाद।

स्फूर्तिमयी ध्वनि में कोकिल ने,
गाया जागृति का नव-गान;
"जाग उठो भारत के यौवन!
दूर नहीं उन्मुक्त विहान।"

भरने आया मलय-समीरण,
तरुण-रक्त में विजयोन्माद;

हिन्दू-मुस्लिम में न विभाजित,
रहा हिन्द का शुभ्राकाश;
विमल स्नेह का सूत्र सुभाष।



द्वितीय निमेष

था आजाद-हिन्द-सेना का,
कौशलमय दृढ़तम निर्माण;

थे सुभाष, आजाद, जवाहर,
गांधी, लक्ष्मी, सैन्य-समाज,
समरातुर थे केप्टन लक्ष्मी,
ढिल्लन, सहगल, शाहनवाज;

फूँक रही थी नेताजी की,
ओजस्वी वाणी नव-प्राण।

था प्राची का द्वार समुत्सुक,
खोले कोई प्रखर प्रकाश;
दमक रहा था दिव्य सुभाष।



स्वर्णिम प्रभात

हँस पड़ा पूर्व में बालारुण,
हँस पड़े दिशा, अवनी, अम्बर;
मचली वीरों की तरुणाई,
मचली सागर की लहर-लहर।

आजाद हिन्द के वीरों के,
भुजबल में रण का ज्वार जगा;
'जय-हिन्द' 'चलो-दिल्ली' स्वर में,
परवशता का संहार जगा।

हाथों में राष्ट्र-ध्वजाएँ थीं,
उरमें उमड़ा उत्साह अतुल;
कैसे उन प्रलयी लहरों में,
रह सकता था पथ तृण-सङ्कुल?

थी पूर्व द्वार पर भारत के,
अगणित तलवारें चमक उठीं;
मधुमय स्वतन्त्रता की स्मितियाँ,
किरणावलियों में दमक उठीं।

था आज युगों के बाद, हिन्द,
के कण-कण को उल्लास मिला;
था आज युगों के बाद प्रपीड़ित,
जननी को विश्वास मिला।

था आज सिन्धु की मृदुता को,
युग-युग में वीचि-विलास मिला;
था वीरप्रसूता को युग में,
वह बिछुड़ा वीर सुभाष मिला।



जय-पथ

पंथी क्या तुम खोज रहे हो,
स्वतन्त्रता के उज्ज्वल पथ को ?
फिर, किस घन-माला के भय से,
रोक रहे हो प्रिय ! रवि–रथ को ?

प्रियंवदा की प्रेम परिधि के,
जीवन की ममता के बाहर;
शीश-दान के सिंह-द्वार पर,
एक उजाला है उज्ज्वलतर।

उसके आगे स्वतंत्रता-प्रिय,
मृत्युजयी का पथ आता है;
जहाँ क्रांति के स्वागत को नित,
अरुण अरुणिमा बरसाता है।

वहाँ आदि में रक्तकणों से,
लिखा हुआ है सन् सत्तावन;
और जहाँ अङ्कित लक्ष्मी के,
पद-चिन्हों के दिव्य ज्योति-कण।

आगे अगणित "बहादुरों" के,
बलिदानों की स्मृतियाँ जगतीं;
अगणित भक्त" चन्द्रशेखर" की,
भव्याभा आहुतियाँ जगतीं।

आगे पाओगे तुम "जलियाँ-
वाले" की खूनी हरियाली;
जीवन की सुषमा संवारते,
"बालिया" के बलिदानी माली।

उनकी स्मृतियों के प्रकाश में,
"बयालीस" तक बढ़ जाना तुम;
पश्चिम की तमसा विदीर्ण कर,
उदयाचल तक चढ़ जाना तुम।

ब्रह्म देश के विजन वनों के,
गिरि–शृङ्गों के भी कुछ आगे;
कलकत्ता से "शरदचन्द्र" की,
फैल रहे किरणों के धागे।

"कदम–कदम" फिर बढ़ते जाना,
आगे "सेवाग्राम" मिलेगा;
जहाँ तुम्हारी आतुरता को,
आशा का आराम मिलेगा।

पथिक! वहीं से तुम्हें दिखेगा,
दुर्दम "दिल्ली" का विस्तृत पथ;
और वहीं से पाओगे तुम,
नव्य चेतना का नूतन रथ।

आगे अरुणा, वीर जवाहर,
हैं पहिने केशरिया बाने;
नेताजी के सिंह सिपाही,
लक्ष्मी, रिपु पर शर संधाने।

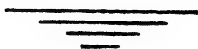
जिनके यौवन की द्रुत गतियां,
"लालदुर्ग" की ओर अग्रसर;
जहां अवस्थित है भारत की,
स्वतन्त्रता देवी का मन्दिर।

मुक्ति—पंथ के पांथ वहीं पर,
पूजा करते जय की प्रतिमा;
वहीं सपूती को वीरों की,
गले लगाती है भारत माँ।

किन्तु अभी माँ के मन्दिर में
स्वतन्त्रता आसीन नहीं है;
शोणित का अभिषेक हुआ पर
प्राण-प्रतिष्ठा शेष रही है।

पथिक ! प्रतिष्ठा का मुहुर्त है
स्वतन्त्रता की, प्राण समर्पण;
राष्ट्र-पताका फहराने का
चूक न जाना वह स्वर्णिम क्षण।

वहीं तुम्हारी क्रांति-लता का
उज्ज्वल "जय" का सुमन खिलेगा;
वहीं प्रतीक्षित इच्छाओं को
निर्मल मुक्ति प्रसाद मिलेगा।



कवि

कौन कलाविद है वह जिसपर
कवि कह कर अभिमान करूँ मैं ?
किसकी वाणी है वह जिसका
कविता कह कर गान करूँ मैं ?

किस कवि ने शशि बिना, नीरजा
के उर में भरदीं सुस्मितियाँ ?
किस कविता की दीप-शिखा पर
शलभ चढ़ा देते आहुतियाँ ?

किसने स्तम्भित मलयानिल को
निज यौवन से नव-गतियाँ दीं ?
किसने निशिमें सोये रवि को
नव-जागृति की नव-स्मृतियाँ दीं ?

किसकी प्रतिमा की किरणों से
मानव-उर-अरविन्द खिला है ?
किसके काव्य-कुञ्ज में मधु-प्रिय
मधुकर को मकरन्द मिला है ?

किसने प्रियवन्दा की सोत्सुक
रतियों का शृङ्गार किया है ?
किसने मानस की कलियों को,
सौरभमय मृदुहास दिया है ?

किसने स्तब्ध सिन्धु से जाकर
कहा कि " लो मुझसे ऊर्मिलता ?
किस कवि ने अपनी गतियों से
सरिता को दी है चञ्चलता ?

किसकी कविता के पयधर ने
स्वतन्त्रता की प्यास जगाई ?
किसकी हुङ्कारों ने जग को
जगने की आवाज़ लगाई ?

किसको नरशार्दूल शिवा के
उद्भव का अभिमान मिला है ?
किसकी वाणी में भूषण की
वाणी का वरदान खिला है ?

हैं अगणित कवि जिनका, युग की
गतियों से निर्माण हुआ है ;
हैं कविताएँ, जिनमें वीरों--
के बल का गुणगान हुआ है ।

किन्तु कौन कवि है वह जिसनें,
निज गति से युग को बदला हो ?
परवशता पर महाप्रलय ले,
सागर से पहिले मचला हो ?

किस कवि ने था भगतसिंह से,
कहा कि "शूली पर चढ़ जाओ;
किसने कहा "चन्द्रशेखर" से,
"माँ के पद पर शीश चढ़ाओं।"

वीर 'जवाहर' के यौवन से,
गतियाँ मिलती हैं कवियों को;
नेताजी के पद—चिन्हों से,
द्युतियाँ मिलतीं हैं रवियों को।

किन्तु बताओ, किस कविने है,
इन नर-रत्नो को प्रकटाया ?
किस कवि के जागृति गानों ने,
है गांधी सा सूर्य जगाया ?

अरुणा, लक्ष्मी, सरोजनी में,
किसने भरदी है यह ज्वाला ?
अस्तंगित जिनकी ऊष्मा से,
पश्चिम का रक्तिम उजियाला।

प्राणोत्सर्गमयी सुरसरि से,
कवियों ने शुचिता पायी है;
बलिदानों की पुण्य-प्रभा से,
तरुण लेखनी मुसकायी है ?

मृत्युजयी के शोणित-कण से,
कविता को भी मिली अमरता;
उसकी कीर्ति-सुधा से कवि भी,
मिटा चुका अपनी नश्वरता।

पर किस कवि ने निज शोणित से,
स्वतन्त्रता के तरु को सींचा?
किसने मरती मानवता को,
महा मृत्यु के मुख से खींचा?

बहती सरिता की गतियों में;
तो तिनके भी हैं बह जाते;
प्रबल प्रभञ्जन के प्रवाह में,
सूखे पल्लव भी उड़ जाते।

पर सरिता की गति के सम्मुख,
कौन बढ़ा अनिरुद्ध तीर सा ?
चला प्रभञ्जन पीछे-पीछे,
किस की गतियों के अनुचर सा ?

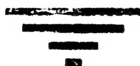
किसमें है वह पौरुष जिससे,
हृदय प्रकम्पित हो पशुता का;
किसकी प्रतिभा से डरती है,
परवशता की प्रलयी राका!

किसकी कविता को मैं स्वर्गिक,
स्वतन्त्रता की नव–छबि कह दूँ ?
कौन कलाविद है वह जिसको,
नव-युग का प्रतिनिधि कविकह दूँ ?

किस कवि को नव-युग की नूतन,
निर्मिति को आह्वान करूं मैं ?
किन पद-चिन्हों पर चलने का,
जग को इङ्गित- दान करूं मैं ?

तप्त तरुणाता है जो माँ की,
परवशता की कड़ियाँ तोड़े ?
है कोई पौरुष जो पशु की,
पशुता का अभिमान मरोड़े ?

है क्या कोई दिव्य कि जिस पर,
कवि कह कर अभिमान करूँ मैं ?
है कोई हुङ्कार कि जिसका,
कविता कह कर गान करूँ मैं ?



हमारे भव्य

—: प्रकाशन :—

—×—

अन्तर्ज्वाला—	१)
वन्दना	॥-)
सांख्ययोग (अप्राप्य)	॥)
कर्मयोग (,,)	॥)
अमरबेल	॥=)

प्रचार साहित्यः——

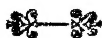
दुर्भिक्ष संताप, महिला गीतरत्न शिव-संकल्प, आनन्द-वर्षा, और क्रांति-गान आदि ।

श्री पर्णकुटी प्रकाशन,
नागदा
(ग्वालियर-स्टेट)

श्री पर्णकुटी प्रकाशन
को

पू. आचार्य नरेन्द्र-
देवजी का आशीर्वादः-
आपकी प्रकाशित पुस्तकें
मिली, अनेक धन्यवाद।

"अन्तर्ज्वाला" को मैंने
जेल में पढ़ा था।
काफी पसन्द आयी।
मै आपके प्रकाशन मंदिर
की उत्तरोत्तर वृद्धि
चाहता हूं।



दैनिक "हिन्दुस्तान"
बम्बई

कवि अपनी कला को यों
ही नहीं बिखेर देना चा-
हता, वह चाहता है कि
उसके पद्य की पंक्तियां
नवयुग के द्वार पर वंदन-
वार बनकर लटकती रहें।